International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
www.socialsciencejournal.in
Volume 3; Issue 5; May 2017; Page No. 107-110

श्री अरविन्द घोष के दार्शनिक विचारों में धार्मिक–राजनीति तत्वों का अध्ययन

डॉ0 कमलेश कुमार सिंह
एसोशिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष – राजनीति विज्ञान, के0ए0 (पी0जी0) कालेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा 20वीं के प्रारम्भिक वर्षो में भारतवासियों में जिस सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक चेतना का उदय हुआ था, उसके लिए पुर्नजागरण आन्दोलन के नेताओं ने अथक प्रयास किया था। भारत में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक क्षेत्र में जिस चेतना का अभ्युदय हो रहा था वह एक नवीन चेतना थी, उदारवाद की जगह क्रान्ति थी। जिस समय भारतीय कांग्रेस पर उदारवादियों का वर्चस्व स्थापित था, उसी समय श्री अरविन्द घोष जैसे उग्र राजनीतिक क्रान्तिकारी भारतीय राजनीतिक मंच पर अवतरित हुए।

श्री अरविन्द अपने दार्शनिक विचारों में राजनीति और धर्म दोनों को अलग–अलग प्रयोग न करके धार्मिक–राजनीति की बात करते हैं। उन्होंने अपने विचारों में धर्म एवं राजनीति का संगम करके एक नवीन धारा को जन्म दिया। उनके राजनीतिक–धार्मिक दर्शन का भव्य प्रसाद ही धर्म और राजनीति के अपूर्व गठबंधन पर निर्मित है। उनकी राजनीति धर्म–प्रमाणित राजनीति थी जहां राजनीति तथा धर्म परस्पर संघर्षमय न होकर सहयोगमय भूमिका निभाते हुए विकास और सुन्दरता का दिव्य दर्शन कराते है। यही कारण है कि हमे उन्हें आध्यात्मिक राजनीति का प्रणेता मानने के लिए विवश हो जाते हैं।

श्री अरविन्द के राजनीतिक विचारों पर धर्म का प्रभाव भारतीय राजनीतिक विचारधारा के लिए कोई अद्भुत खोज नहीं है। भारत में प्राचीनकाल से ही धर्म–अनप्राणित राजनीतिक व्यवहार का प्रचलन था। वास्तव में वैदिककाल से ही राजनीति का अध्ययन धर्म के अंग के रूप में किया जाता रहा है। धर्म मानव–जीवन की आचार संहिता माना जाता था इस आचार–संहिता के अन्तर्गत राजा का प्रजा के प्रति कर्तव्य तथा प्रजा का राजा एवं राष्ट्र के प्रति कर्तव्य भी सम्मिलित था। सामाजिक एवं राजनीतिक दर्शन के क्षेत्रों में भी समाज एवं राज्य के अंगों का परस्पर सम्बन्ध आध्यात्मिक होता था और पूर्णता की प्राप्ति लिए प्रत्येक अंग को अपने सामाजिक एवं राजनीतिक कर्तव्यों का पालन करना पड़ता था। अभिमान शून्य ह्रदय से समाज एवं राष्ट्र के कल्याण हेतु तत्पर रहने से ही मनुष्य आध्यात्मिक पूर्णता की योग्यता को प्राप्त करता था, ऐसा माना जाता था। केवल वेदों में ही नहीं महाभारत और रामायण में भी राजनीति को धर्म के अंग के रूप में स्वीकार किया गया है तथा राजा के कर्तव्यों को 'राजधर्म' की संज्ञा दी गयी है।

स्पष्ट है कि भारत में राजनीति को एक स्वतंत्र विषय के रूप में स्थान नहीं प्राप्त था अपितु वह धर्म का ही एक भाग थी। कला, साहित्य, दर्शन, विज्ञान, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, कानून, रीति–रिवाज, पारिवारिक एवं सामाजिक संगठन सभी धर्म की विभिन्न शाखाओं के रूप में माने जाते थे। वर्णाश्रम व्यवस्था में ब्राह्मणों एवं सन्यासियों को सभी वर्गो से उच्च मानना भी यह प्रदर्शित करता है कि प्राचीन काल से ही भारत में भौतिक उत्कर्ष की अपेक्षा आध्यात्मिक उत्कर्ष को अधिक महत्व प्रदान किया गया था।

श्री अरविन्द के विचारों पर प्राचीन भारतीय धार्मिक ग्रन्थों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था। ऐसी परिस्थित में यह सर्वथा स्वाभाविक ही था कि उनके विचार धर्म से अनुप्रमाणित हो। श्री अरविन्द ने उग्र राष्ट्रवाद व हिन्दुत्व के बीच सम्बन्ध स्थापित किया। उनका विचाार था कि मानव का उद्देश्य कि ईश्वर के विधान को पूर्ण करना और यह तभी सम्भव है जब मनुष्य आत्म–पूर्णता की प्राप्ति कर लें। आत्म–पूर्णता की प्राप्ति राष्ट्र में ही संभव है। भारत को ब्रिटेन के आधिपत्य से मुक्त कराने की उनकी इच्छा तथा स्वदेशी संबंधी विचार का आधार उनकी यही धारणा थी। स्पष्ट है कि श्री अरविन्द के राजनीतिक विचार धर्म से अनुप्रमाणित थे।

भारत माता को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त कराने के लिए श्री अरविन्द ने जिन राजनैतिक पद्धतियों का सहारा लिया उन्हें उन्होंने धर्म के आधार पर ही उचित ठहराया। सुप्त भारतीय जनमानस में राजनीतिक चेतना जागृत करने के लिए उन्होंने जिस राजनीतिक दर्शन का प्रतिपादन किया उसे यदि आध्यात्मिक राजनीति दर्शन कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। गीता श्री अरविन्द की राजनीतिक पद्धति का आदर्श रही। श्री अरविन्द के भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के सम्बन्ध में व्यक्त किये गये उनके विचारों का अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो अर्जुन युद्ध करने के लिए भारतीय जनता को मातृ–भूमि की रक्षा हेतु क्षत्रिय–धर्म का निर्वाह करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन का दमन करने के लिए अंग्रेजों द्वारा आन्दोलन के प्रमुख नेताओं को जेल में बंद कर दिया गया। नेतृत्व के अभाव में सम्पूर्ण देशवासियों में अवसाद छा गया। आन्दोलन की गति धीमी पड़ने लगी। ऐसे समय में श्री अरविन्द ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का नियंन्ता ईश्वर को बताकर भारतवासियों में अपूर्व आशा का संचार किया। उनका विचार था भारतवासी ऐसे व्यक्ति है जो जीवन के कष्टों का स्वागत करते हैं। भारतवासियों के अन्दर ऐसी आध्यात्मिक शक्ति अंतनिर्हित है जो भौतिक शक्ति की अपेक्षा महान है। अतः आन्दोलन के प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के कारण आन्दोलन समाप्त नहीं हो सकता। वास्तव में ये आन्दोलनकारी नेता ईश्वर द्वारा प्रेशित किये गये थे और ईश्वर की इच्छानुसार ही आन्दोलन से कुछ समय के लिए हटा लिए गये है। जिससे भारतवासी यह अनुभव कर सकें कि वे गिरफ्तार नेताओं के नेतृत्व में कार्य नहीं कर रहे है अपितु उनके अंतःकरण में एक उच्चतर शक्ति कार्य कर रही है और इन नेताओं के चले जाने पर भी वह उच्चतर शक्ति भारतीय आन्दोलनकारियों को प्रेरणा एवं शक्ति प्रदान करेगी। श्री अरविन्द भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन को पूर्णतया राजनीतिक ही नहीं समझते थे अपितु उनके मूल में उन्हें एक आध्यात्मिक शक्ति अन्तर्निहित दिखायी पड़ती है। भारतीय आन्दोलन के प्रमुख नेता अपनी शक्ति से कार्य नहीं कर रहे हैं अपितु वे ईश्वर की शक्ति से प्रेरित है। प्रत्येक विशिष्ट व्यक्ति की शक्ति सर्वव्यापी ईश्वर की शक्ति का एक भाग है। भारतीय आन्दोलन में ईश्वर की शक्ति कार्य कर रही है न कि कोई व्यक्तिगत शक्ति किन्तु जब किसी मनुष्य को चेतना जागृत हो जाती है तो वह अपने को शक्तिशाली अनुभव कर सकता है,

यद्यपि वह वास्तव में ऐसा होता नहीं। ईश्वर ने उसे शक्ति तो दी है और वह उसे वापस भी ले सकता है।

श्री अरविन्द के इन दार्शनिक विचारों ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को गत्यात्मकता प्रदान की। कदाचित् श्री अरविन्द का यह विश्वास था कि उनकी क्रान्तिकारी आन्दोलन तभी अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है जब यह मात्र राजनीतिक दांव–पेचों तक सीमित न होकर आध्यात्मिकता की ओर झुका हुआ हो। अपने इसी विश्वास की व्यावहारिक परिणति हेतु उन्होंने अपने भाषणों में भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम को आध्यात्मिक शक्ति द्वारा प्रेषित सिद्ध करते हुए वस्तुतः सम्पूर्ण राजनीतिक आन्दोलन को एक उच्चत्तर आध्यात्मिक आन्दोलन का अंग मात्र बना दिया। श्री अरविन्द का विचार था हिन्दुस्तान में जब–जब महान जागृति हुई है, तब–तब उसने प्रगति की है– चाहे वह किसी तरह की क्यों न हो उसने हमेशा किसी न किसी गहरे धार्मिक श्रोत से जीवनी शक्ति पायी है। जब कभी विशाल धार्मिक आन्दोलन संकुचित हुआ है तब राष्ट्रीय गति भी अपूर्ण, अस्थायी और लड़खड़ाती हुई रही है। यह चीज बार–बार हमारे इतिहास में अस्थिर रूप में दिखाई देती है और यह इस बात का प्रमाण है कि यह हमारे स्वभाव का अंग है। संभवतः धर्म और राजनीति के समन्वय के पीछे श्री अरविन्द की यही धारणा प्रेरणा का मुख्य श्रोत रही है। श्री अरविन्द इस तथ्य से भली–भांति अवगत थे कि आध्यात्मिकता भारत की आत्मा है और यदि कोई आन्दोलन आध्यात्मिकता से रहित होगा तो वह आत्मा रहित निर्जीव शरीर के समान निष्क्रिय एवं महत्वहीन होगा। आन्दोलन को सक्रियता प्रदान करने के लिए उसके आदर्श एवं लक्ष्य को आध्यात्मिक बनाना आवश्यक है। यही कारण है कि श्री अरविन्द ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को ईश्वरेच्छा का परिणाम माना। श्री अरविन्द भारतवासियों को कायरता का परित्याग करके उत्साहपूर्वक निडरता से स्वतंत्रता–आन्दोलन में भाग लेने को आह्वान करते हुए कहा कि दूसरों के लिए स्वयं को, अपने शरीर को, अपने सम्पत्ति को, अपने जीवन को और अपना सर्वस्व बलिदान कर देना ही राष्ट्रवादी धर्म है। राष्ट्रवादियों के सच्चे धर्म का तात्पर्य है कि उनके अंदर साहस होना चाहिए। उनके अन्दर जो अजर, अजन्मा शक्ति कार्य कर रही है, उसे तलवार काट नहीं सकती, आग जला नहीं सकती और पानी डुबा नहीं सकता।

श्री अरविन्द के द्वारा छेड़ा गया यह आध्यात्मिक राजनीतिक आन्दोलन दमन तथा अवसाद के प्रत्येक क्षण में क्रान्तिकारियों को जीवनी शक्ति प्रदान करता रहा। सर्वत्र उत्साह की लहरे फैल गयी और दिग्–दिगन्त वंदे–मातरम् के निनाद से गुंजायमान हो उठा। ऐसे वायुमण्डल में जीना, साहस दिखाना, मिलकर काम करना और आशा रखना लोगों को गौरवपूर्ण प्रतीत होने लगा। पुरानी उदासीनता और कायरता लुप्त हो गयी और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम एक ऐसे संग्राम के रूप में प्रकट हुआ, हो अजर और अमर था तथा जिसका दमन विदेशियों के द्वारा नहीं किया जा सकता था। विशुद्ध राजनीतिक आन्दोलन में श्री अरविन्द द्वारा फूंका गया आध्यात्मिक शंखनाद भारत को विजय के निकट ले आया। 1908 में बम्बई में भाषण देते हुए श्री अरविन्द ने कहा स्वयं भगवान ही कष्ट सहने का आदेश होता है तो वे कष्ट सहन करते है, ताकि औरों को बल मिले। अगर भगवान उन्हें फेंक दे तो इसका अर्थ यह है कि अवसर पर उनकी आवश्यकता नही है। अगर परिस्थिति बिगड़ जाय तो हो सकता है कि उनसे न केवल जेल जाने की वरन् प्राण–त्याग करने की मांग जाय। वे खुशी से बलि चढ़ जायेगें। अपनी बलि देने वालों के स्थान पर भगवान अधिक योग्य लोागें के लें आयेंगे। भगवान स्वयं कार्य एवं कर्ता दोनों है। देश के नाम से कार्य करते हुए कई लोग सीधे भगवान के आदेश को पालन कर रहे है। वास्तव में अरविन्द के ये विचार राजनीतिक क्रान्तिकारी के विचार नहीं अपितु एक महर्षि के उपदेश प्रतीत होते हैं एक ऐसा महर्षि जो कर्मयोगी है जगत् की दुर्दशा से द्रवीभूत जगतोद्धार में संलग्न हो गया है।

स्वतंत्रता आन्दोलन को आध्यात्मिक स्वरूप प्रदान करने के पश्चात् यह आवश्यक हो जाता है कि इस आन्दोलन को सक्रिय बनाने वाली पद्धति का भी आध्यात्मिक औचित्य हो तथा इस पद्धति से प्राप्त किया जाने वाला लक्ष्य भी आध्यात्मिक हो। श्री अरविन्द इस तथ्य से अवगत थे इसलिए उन्होंने निष्क्रिय–प्रतिरोध, स्वदेशी, बहिष्कार आदि जिन पद्धतियों का प्रयोग किया उसे आध्यात्म भावापन्न कर दिया, जिससे भारतीय आध्यात्मिकता की भावना को ठेस न पहुंचे।

श्री अरविन्द ने अपने राजनीतिक लक्ष्य की पूर्ति हेतु जिन पद्धतियों को अपनाया उनमें निष्क्रिय प्रतिरोध सिद्धान्त मुख्य था अर्थात् अवपीड़क शासन अथवा संस्थाओं का इस प्रकार विरोध करना जिससे वे पंगु बन जाय। निष्क्रिय प्रतिरोध सिद्धान्त के अन्तर्गत श्री अरविन्द ने क्रान्तिकारियों को दमन सहने का आह्वान किया तथा यथासंभव हिंसात्मक उपाय न अपनाने का परामर्श दिया किन्तु श्री अरविन्द महात्मा गांधी के समान अहिंसावादी न थे। उन्होंने गीता से प्रेरणा लेकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को 'धर्म–युद्ध' की संज्ञा दी तथा इस धर्म–युद्ध में विजय–प्राप्ति हेतु प्रत्येक संभव उपाय अपनाये जाने पर बल दिया चाहे वे हिसांत्मक उपाय ही क्यों न हो। श्री अरविन्द का विचार था कि यदि ब्रिटिश सरकार निष्क्रिय प्रतिरोध का अत्यधिक क्रूरतापूर्वक दमन करती है और दमन असह्य हो जाता है तो निष्क्रिय प्रतिरोध सक्रिय प्रतिरोध में बदल जायेगा तथा हिंसा का उत्तर हिंसा से दिया जायेगा। श्री अरविन्द ने धर्म–युद्ध में साधन की अपेक्षा साध्य को महत्ता दी चूँकि स्वतंत्रता संग्राम में धर्म भारतीयों के पक्ष में है अतः स्वाभाविक है कि कृष्ण के उपदेशों के अनुरूप ही भारतीय ब्रिटिश आततायियों का व्यापक नर–संहार करने से पीछे नहीं हटेंगे। इस नर–संहार से पीछे हटने पर वे अपयश के अधिकारी होंगे। इस प्रकार श्री अरविन्द ने हिंसात्मक पद्धति को भी धर्म के अनुरूप सिद्ध कर दिया। आततायियों का दमन करना धर्म–विपरीत आचरण नहीं है।

निष्क्रिय प्रतिरोध की व्यावहारिक परिणिति हेतु स्वदेशी एवं वाहिष्कार का आश्रय लेते हुए श्री अरविन्द ने स्वतंत्रता के कार्य को एक महान यज्ञ की संज्ञा देते हुए स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा जैसे कार्यों को इस महान यज्ञ को सम्पनन करने वाली क्रियायें मात्र माना। श्री अरविन्द की राजनीतिक पद्धति उनके लिए 'माँ' के आदेश के समान थी। आन्दोलनकारी यदि स्वयं को माँ की सेवा में पूर्णतया समर्पित कर देंगे तो माँ उन्हें स्वयं कार्य करने की योजनायें एवं पद्धतियां प्रदान करेगी। स्वतंत्रता के लिए तन–मन–धन का बलिदान करना प्रत्येक आन्दोलनकारी का कर्तव्य है। इस कर्तव्य के निवार्ह में ईश्वर उनकी सहायता करेगा तथा ईश्वर द्वारा जो योजना एवं पद्धति तैयार की जायेगी वह मानव–बुद्धि द्वारा तैयार की गयी योजनाओं एवं पद्धतियों से श्रेष्ठतर एवं उच्चतर होगी।

श्री अरविन्द का विचार था कि यज्ञ को सम्पन्न करने में बहुत से असुर तथा अन्य अशुभ शक्तियां व्यवधान उत्पन्न करती है। ऋषिगण इन असुरों को क्षत्रिय धनुष का आश्रय लेकर ही समाप्त कर पाते थे और तब यज्ञ शान्तिपूर्वक सम्पन्न होता था। अतः निष्क्रिय–प्रतिरोध आन्दोलनकारियों को क्षत्रिय का धनुष उठाने की भी आज्ञा दे सकता है।

इस प्रकार श्री अरविन्द ने अपनी राजनीतिक पद्धति पर धर्म का आवरण डालकर उसे सर्वथा पवित्र घोषित कर दिया। इस राजनीतिक पद्धति का अनुसरण करके व्यक्ति धर्म का अनुसरण करेगा क्योंकि यह राजनीतिक पद्धति धर्म के सर्वथा अनुकूल है। बौद्ध धर्म में जिस अहिंसावाद को चरम पराकाष्ठा पर पहुंचाकर राजनीति में कायरता का समावेश कर दिया गया था श्री अरविन्द

की राजनीतिक पद्धति ने उस कायरता की इति श्री कर दी। गांधी तथा बुद्ध के घोर अंहिसावाद का प्रबल विरोध किया।

श्री अरविन्द का 'राजनीतिक वेदान्तवाद' धर्म और राजनीति के घनिष्ठ संबंध को इंगति करता है। श्री अरविन्द यह जानते थे कि धर्म की उंगली पकड़कर भारतवासी स्वतंत्रता के मार्ग पर आसानी से चल सकते है। अतः श्री अरविन्द ने भारतीय वेदान्त से उदाहरण लेकर उसे राजनीतिक क्षेत्र में लागू किया। राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम को श्री अरविन्द ने यज्ञ के समान बताया और उस यज्ञ की देवी 'काली' को शक्ति का स्त्रोत माना। भारत की तत्कालीन दुर्दशा का कारण यह था कि भारतवासियों ने शक्ति उपासना का परित्याग कर दिया था। श्री अरविन्द ने 'माता' के समक्ष भारतवासियों से तन, मन, धन सर्वस्व बलिदान कर देने का आह्वान करते हुए भारतीय वेदान्त के 'बलिदान' संबंधी सिद्धान्त को राजनीतिक क्षेत्र में लागू किया। जिस प्रकार 'मुमुक्षु' के लिए 'बलिदान' की प्रवृत्ति अतिआवश्यक है उसी प्रकार राष्ट्रवादी भी एक मुमुक्षु है जो राष्ट्र की मुक्ति के लिए प्रसासरत् है। इस मोक्ष के मार्ग पर भी 'बलिदान' की प्रवृत्ति आवश्यक होती है।

श्री अरविन्द का विचार था कि मोक्षार्थी के समक्ष 'मोक्ष' ही परम लक्ष्य होता है और इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु वह हर संभव उपाय अपनाता है। अतः श्री अरविन्द ने राष्ट्रवादियों को यह उपदेश दिया कि देश की रक्षा उनका मुख्य लक्ष्य है और उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जो भी उपाय अपनाया जायेगा वह उचित ही होगा। अतः राष्ट्रवादी का कर्तव्य है कि वह ऐसे मार्ग पर चले जिससे अपने राष्ट्र की मुक्ति के लक्ष्य को शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त कर ले।

श्री अरविन्द राष्ट्र को माता के रूप में देखते है। राष्ट्र का भौतिक स्वरूप श्री अरविन्द के लिए गौण है, उसका आध्यात्मिक स्वरूप ही उसे सर्वथा पूजनीय बना देता है। माता की रक्षा करना प्रत्येक पुत्र का कर्तव्य है। अतः राष्ट्र की रक्षा करते समय राष्ट्रवादी किसी भूमि के टुक्ड़े की रक्षा नहीं करता अपितु वह अपनी माता की रक्षा के कर्तव्य का निर्वाह करता है। राष्ट्र और उसके निवासियों के बीच माता–पुत्र का संबंध देखने की प्रवृत्ति प्राचीन वेदों में भी विद्यमान थी। अरविन्द ने उसी परम्परा को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया।

श्री अरविन्द का विचार था कि ब्रिटिश सरकार की आधीनता को ही स्वराज समझने वाले भारतवासियों की आत्मा पर माया का आवरण था किन्तु ब्रिटिश आधिकारियों के असह् अत्याचारों ने उनके इस आवरण को हटा दिया जिससे उन्हें पराधीनता और स्वाधीनता की स्थिति में अंतर ज्ञात हुआ। यह माया संबंधी सिद्धान्त भी भारतीय वेदान्त की अपूर्व देन है जिसको श्री अरविन्द ने राजनीतिक क्षेत्र में लागू करके भारतीयों की सुप्त राजनीतिक चेतना के न केवल जागृत अपितु उसमें स्वतंत्रता की अग्नि को प्रज्ज्वलित कर देने का प्रयत्न किया। इस प्रकार श्री अरविन्द की राजनीतिक पद्धति ही नहीं अपितु उनका राजनीतिक लक्ष्य भी आध्यात्मिकता से ओत–प्रोत था।

श्री अरविन्द ने स्वराज के संबंध में 'आंतरिक स्वराज' के सिद्धान्त का सम्पादन किया। राजनीतिक स्वराज की प्राप्ति तभी संभव है जब प्रत्येक राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति अपने अंदर निहित स्वराज को पहचाने। मानव आत्मा स्वंतत्र एवं सर्वोपरि है, उस पर कोई शासन नहीं कर सकता। इस अन्तर्निहित स्वराज की अनुभूति वाह्य स्वराज को सहज बना देती है। यह आंतरिक स्वराज के आध्यात्मिक प्रभाव का परिणाम है। इस प्रकार श्री अरविन्द के लिए स्वराज मात्र एक राजनैतिक सिद्धान्त न होकर एक आध्यात्मिक अनुभूति की वस्तु था।

श्री अरविन्द की राजनीतिक पद्धति एवं लक्ष्य ही आध्यात्म–भावापन्न न थे अपितु उनका राजनीतिक–दर्शन भी पूर्णतया आध्यात्मिकता से ओत–प्रोत था।

श्री अरविन्द के राजनीतिक–दर्शन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचार राष्ट्रवाद संबंधी है जो पूर्णतया आध्यात्म भावापन्न है। श्री अरविन्द ने राष्ट्रवाद को प्रत्येक नागरिक का धर्म घोषित किया। उनका यह विचार आध्यात्मिकता के चरम बिन्दु पर उस समय पहुँच जाता है, ज बवह सनातन धर्म को ही राष्ट्रवाद घोषित करने लगते है।

श्री अरविन्द का विचार था कि राष्ट्रवाद एक धर्म है जो ईश्वर से निःसृत है। श्री अरविन्द राष्ट्रवाद को ईश्वरीय शक्ति से उत्पन्न मानते है। अतः स्वाभाविक है कि राष्ट्रवाद उनके लिए मात्र राजनीतिक–भावना नहीं है ऐसा प्रतीत होता है कि श्री अरविन्द राष्ट्रवाद को धर्म घोषित करके भारतीय राष्ट्रवाद को पवित्र घोषित करना चाहते है। भारतीय राष्ट्रवाद धर्म से गठवंधित होने के कारण पाश्चात्य राष्ट्रवाद की भांति अन्य राष्ट्रो के प्रति घृणा एवं द्वेष की शिक्षा नहीं देता अपितु वह अन्य राष्ट्रो के प्रति प्रेम एवं सद्भाव की शिक्षा देता है।

श्री अरविन्द के धार्मिक राष्ट्रवाद से यह निष्कर्ष निकालना अनुचित न होगा कि राष्ट्रवाद को धर्म घोषित के वह अधिकाधिक भारतीयों को राष्ट्रवादी बनाने का मन्तव्य पूरा करना चाहते थे। श्री अरविन्द ने अपनी तीव्र प्रतिभा से यह जान लिया था कि धर्म ही वह तत्व है, जो भारतीयों को स्वतंत्रता संग्राम में सर्वस्व अर्पण कर देने के लिए सहज ही प्रेरित कर सकता है क्योंकि प्राचीनकाल से ही भारतीय धर्म के नाम पर मर–मिटने के लिए तैयार रहते थे। अतः यदि राष्ट्रवाद को धर्म घोषित कर दिया जाय तो मातृ–भूमि के नाम पर भारतीयों में आत्म–बलिदान की भावना का सहजता से विकास हो सकेगा। श्री अरविन्द ने भारतीय राष्ट्रवादियों को वास्तविक राष्ट्रवाद का अर्थ समझाया कि आज भारत में एक ऐसा सम्प्रदाय है जो अपने को राष्ट्रवादी कहता है। प्रत्येक राष्ट्रवादी को यह कार्य धार्मिक भावना से करना चाहिए। उसे यह स्मरण रखना चाहिए कि वह मात्र ईश्वर के यंत्र है। बंगाल के लोगों में धर्म से राष्ट्रवाद उत्पन्न हुआ है और यह धर्म की तरह स्वीकार किया गया है किन्तु कुछ शक्तियां जो इस धर्म के विरूद्ध है इस उभरती हुई शक्ति को दमन करने का प्रयास कर रही है। जब एक नये धर्म का उद्भव होता है तो उसका दमन करने का प्रयास हमेशा किया जाता है। बंगाल में भी एक नया धर्म, एक पवित्र और सात्विक धर्म उत्पन्न हो रहा है और उसका दमन करने का प्रयास किया जा रहा है किन्तु राष्ट्रवाद का दमन नहीं किया जा सकता। राष्ट्रवाद की मृत्यु नहीं हो सकती क्योंकि यह मानव नहीं है, बंगाल में ईश्वर कार्य कर रहा है और ईश्वर की न तो हत्या की जा सकती है और न उसे जेल भेजा जा सकता है। श्री अरविन्द बंगाल के राष्ट्रवादी आन्दोलन की ओर संकेत करते हुए राष्ट्रवाद की अमरता के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते है।

श्री अरविन्द का यह आध्यात्मिक राष्ट्रवाद आध्यात्मवाद की चरम–सीमा को छूना चाहता है। अतः वह सनातन धर्म के समक्ष समर्पण करता हुआ प्रतीत होता है। राष्ट्रवाद को धर्म मानने वाले श्री अरविन्द की आध्यात्मिक राजनीति उस समय पराकाष्ठा पर पहुंच जाती है जब वह सनातन–धर्म को भारतीय राष्ट्रवाद घोषित कर देते है। यहां धर्म और राजनीति परस्पर इतने गुंथे हुए प्रतीत होते है कि हमें यह निष्कर्ष निकालने के लिए विवश होना पड़ता है कि अरविन्द का राष्ट्रवाद बिना धर्म के असहाय हो जाता। वह पूर्णतया धर्म पर आश्रित है और धर्म का एक अभिन्न अंग है। सनातन धर्म का अनुसरण करने पर ही राष्ट्रवाद सफल हो सकता है। पाश्चात्य राष्ट्रवादी धारणा भारतीय परिस्थितियों के विरूद्ध है। अतः उसका अनुसरण भारत के लिए घातक हो सकता है। श्री अरविन्द का विचार था कि परधर्म भयावह है। दूसरे के धर्म को स्वीकार करना विनाशकारी है।

श्री अरविन्द की राष्ट्रवाद संबंधी अवधारणा धर्म का अभिन्न अंग है। धर्म के अभाव में श्री अरविन्द का राष्ट्रवाद अधूरा रह जायेगा। क्योंकि धर्म उनके राष्ट्रवाद का पथ–प्रदर्शक है।

श्री अरविन्द का स्वतंत्रता संबंधी विचार 'धर्म' से अनुप्रमाणित है। श्री अरविन्द वाहय स्वतंत्रता की अपेक्षा आंतरिक स्वतंत्रता को अधिक महत्वपूर्ण मानते थे। श्री अरविन्द के अनुसार स्वाधीनता से तात्पर्य है अपनी सत्ता के नियम का अनुसरण करना। श्री अरविन्द का विचार है कि राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए आध्यात्मिक स्वतंत्रता की प्राप्ति आवश्यक है। आत्मा की स्वतंत्रता ही वास्तविक स्वतंत्रता है। आत्मा की स्वतंत्रता का समर्थन करते हुए श्री अरविन्द स्वतंत्रता सम्बन्धी अवधारणा को पूर्णतया आध्यात्मिक स्परूप प्रदान कर देते है। 1910 ई0 से लेकर 1950 ई0 तक श्री अरविन्द की स्वतंत्रता संबंधी अवधारणा आध्यात्मिकता की चरम पराकाष्ठा पर पहुंच चुकी थी।

श्री अरविन्द का विचार था कि भारत की स्वतंत्रता इसलिए आवश्यक है जिससे वह सम्पूर्ण विश्व में आध्यात्मिकता की धारा प्रवाहित कर दे। भारत की स्वतंत्रता का लक्ष्य है– सम्पूर्ण विश्व को आध्यात्म भावापन्न कर देना। आध्यात्मिकता की पवित्र धारा में सम्पूर्ण विश्व को डुबो देने का स्वप्न देखने वाले श्री अरविन्द के राजनीतिक विचार उनकी आध्यात्मिक अनुभूति के समक्ष गौण प्रतीत होने लगते है। चूँकि भारत की स्वतंत्रता का लक्ष्य आध्यात्मिकता की पवित्र नदी में सम्पूर्ण मानव–जाति को स्नान कराना था, अतः स्वाभाविक है कि इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए राजनीतिक क्रान्तिकारी को आध्यात्मिक साधना–पत्र पर चलने वाले साधक की भावना का अनुसरण करना चाहिए जैसे चैतन्य निमाई पंडित न रहकर कृष्ण, राधा या बलराम बन जाते थे, उसी तरह हर एक को अपना अलग जीवन छोड़कर राष्ट्र के लिए जीवित रहना चाहिए। जैसे मोक्ष चाहने वाला सब कुछ छोड़कर केवल मोक्ष ही सोचता है, वैसे ही हमें सदा अपने राष्ट्र के उत्थान में रम जाना चाहिए। माँ को स्वाधीन और महान देखने का हमारा पागलपन वैसा ही होना चाहिए जैसे श्री कृष्ण के दर्शन के लिए चैतन्य का था।

स्पष्ट है कि राजनीतिक स्वतंत्रता की परिपूर्ति आध्यात्मिक स्वतंत्रता में देखने वाले तथा राजनीतिक क्रान्तिकारी में आध्यात्मिक साधक का दर्शन करने वाले, सम्पूर्ण विवश को भारतीय आध्यात्मिकता में डुबा देने का स्वप्न देखने वाले श्री अरविन्द के लिए राजनीति धर्म के अभाव में अधूरी थी। श्री अरविन्द के लिए धर्म राजनीति का लक्ष्य था क्योंकि उनके राजनीतिक के लिए संदेशवाहक था। धर्म ने राजनीति के औचित्य को सिद्ध किया। श्री अरविन्द की राजनीति, धार्मिक वातावरण में पल्लवित एवं पुष्पित हुई दूसरे शब्दों में श्री अरविन्द की राजनीति धर्म प्रधान है।

श्री अरविन्द का विश्व संघ संबंधी विचार जिसमें उन्होंने आध्यात्म भावापन्न मानव को विश्व नागरिक का सदस्य माना है, आध्यात्मिकता का चरम बिन्दु है। आज उनके इस विश्व नागरिकता के स्वप्न के प्रतीक के रूप में पांडिचेरी में स्थापित 'ओरोविल आश्रम' उनके धार्मिक एवं राजनीतिक विचारों के समन्वय का प्रतीक है जो यह संदेश देता है कि मानव–मात्र आध्यात्मिकता के उस चरम बिन्दु पर पहुंच जाय जहां जातीयता, क्षेत्रीयता, राष्ट्रवाद की सीमा लांघकर मनुष्य सम्पूर्ण चराचर जगत् में प्रेम करना सीख जाता है।

अरविन्द का तत्वशास्त्र, उनका इतिहास तथा संस्कृति दर्शन दनकी राष्ट्रवाद, स्वतंत्रता तथा आध्यात्मीकृत समष्टिवाद की धाारणाएं पूर्व तथा पश्चिम के विचारों का समन्वय है। उन्होंने बार–बार आत्मा की शक्तियों का उल्लेख किया और बतलाया कि उन्हीं के द्वारा सामाजिक, राजनीति अथवा तात्विक स्तर पर स्थायी समन्वय किया जा सकता है। अरविन्द के उक्त विचार आधुनिक राजनीतिक दार्शनिक को विचित्र लगेंगे और यह संभव नही है कि अधिक लोग उनकी ओर आकृष्ठ हो सके। यद्यपि यह मानना पड़ेगा कि शुद्ध सैद्धान्तिक स्तर पर अरविन्द ने पूर्व तथा पश्चिम के राजनैतिक दर्शन को समन्वित करने का रमणीक प्रयत्न किया। अन्ततोगत्वा सभी राजनीतिक दार्शनिक कुछ अंशों में आस्था की अपेक्षा करते है। शुद्ध भौतिकवादी को प्लेटो, सन्त एक्विनास और हेगेल प्रतिक्रियावादी प्रतीत होते है, जबकि अध्यात्मवादी को मैकियावेली और हॉब्स उथले–छिछले जान पड़ते हैं, आत्मा की शक्तियों में विश्वास रखने वालों के लिए अरविन्द के राजनीतिक दर्शन में गंभीर संदेश निहित है।

श्री अरविन्द ने भारतीय वेदान्तवाद को राजनीतिक क्षेत्र में लागू किया। उनका सम्पूर्ण दर्शन ही मानव के परम् लक्ष्य की प्राप्ति है। परम लक्ष्य यानि आध्यात्मिक भारत/आध्यात्मिक मानव। आज पृथ्वी पर चारों ओर श्री अरविन्द दर्शन समझने का आग्रह दिखाई दे रहा है। श्री अरविन्द ने वह नवीन ज्योति प्रज्जवलित कर दी जिसकी दर्शन के क्षेत्र को बहुत समय से आवश्यकता थी। धर्म और राजनीति का अनोखा सम्मिश्रण ही विकास एवं प्रगति का वास्तविक दर्शन करायेगा। इनका अलग–अलग अस्तित्व तो मात्र संघर्ष होगा।

निष्कर्षत

कहा जा सकता है कि श्री अरल्निद के दार्शनिक विचारों में वह नवीन चेतना तथा मौलिकता है जिसमें वर्तमान विश्व में व्याप्त समस्याओं का समाधान निहित है। उनका दर्शन धर्म और राजनीति का परस्पर मिश्रण ही नहीं बल्कि उसका दिव्य रूप है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्री अरविन्द मानव से अतिमानव की ओर अनुवादक– वन्दना अनुबने श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी
2. श्री अरविन्द गीता प्रबन्ध अनुवादक– जगन्नाथ वेदालंकार श्री अरविन्द सोसायटी, पाण्डिचेरी
3. श्री अरविन्द दिव्य जीवन अनुवादक– श्याम सुन्दर, झुनझुनवाला श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी– 605002
4. श्री अरविन्द अपने विषय में अनुवादक– जगन्नाथ वेदालंकार श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी– 605002
5. श्री अरविन्द प्रार्थना और ध्यान श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी– 605002
6. श्री अरविन्द मानव एकता का अनुवादक– लीलावती इन्द्रसेन आदर्श–युद्ध और आत्म श्री अरविन्द सोसायटी निर्णय पाण्डिचेरी– 605002
7. श्री अरविन्द मानव चक्र अनुवादक– लीलावती इन्द्रसेन श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी– 605002
8. मनोजदास महान योगी श्री अरविन्द अनुवादक– शंकर लाल पुरोहित नेशनल बुक ट्रस्ट आफ इण्डिया, नई दिल्ली।
9. अर्चना श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी,
10. आदिति श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी
11. कर्मयोगिन श्री अरविन्द सोसायटी पाण्डिचेरी,
12. अमर उजाला 15 अगस्त आगरा संस्करण 2012
13. वन्दे मातरम् श्री अरविन्द घोष